नयचक्र में उद्धृत आगम-पाठों की समीक्षा

जितेन्द्र शाह

द्वादशार नयचक्र एक महत्त्वपूर्ण दार्शनिक ग्रन्थ है। जिसके कर्ता आचार्य मल्लवादी ने (छठीं उत्तरार्ध) एवं टीकाकार आचार्य सिंहसूरि ने (सातवीं उत्तरार्ध) कुछ आगमों के वाक्यों को उद्धृत किया है। नयचक्र मूल एवं टीका में उद्धृत आगम पाठों की वर्तमान में प्रसिद्ध आगम पाठों से तुलना करने पर भिन्नता पाई जाती है। जिसका संक्षिप्त विवेचन प्रस्तुत लेख में किया गया है।

नयचक्र मूल में आचारांग, सूत्रकृतांग, स्थानांग, व्याख्याप्रज्ञप्ति (भगवतीसूत्र) के पाठों को उद्धृत किया गया है। टीका में आचारांग, सूत्रकृतांग, स्थानांग, व्याख्याप्रज्ञप्ति, नंदीसूत्र, जीवाभिगमसूत्र, प्रज्ञापना, अनुयोगद्वारसूत्र आदि जैनागमों के वाक्यों को उद्धृत किया गया है। जिसमें पाठक्रमों की भिन्नता के अलावा भाषाकीय भिन्नता पाई जाती है। यद्यपि यह सत्य है कि वर्तमान काल में पाये जाने वाले आगमों के भी अनेक पाठभेद प्राप्त होते हैं तथापि यह सब पाठ-भेद प्रायः भाषाकीय परिवर्तनों के आधार पर ही है।

जागृत, सुप्त, सुषुप्त एवं तुरीय—ये चार अवस्थाएँ हैं इनका निपरूण करते हुए नयचक्र के द्वितीय विधि अर में आचारांग के एक वाक्य को उद्धृत किया गया है, जो इस प्रकार है—

सुत्ता अमुणी सया, मुणीणो सया जागरंति।

जबकि वर्तमान प्राप्त आगम में—

'सुत्ता अमुणी, मुणिणो सययं जागरंति' पाठ मिलता है। उक्त दोनों पाठों की तुलना करने पर अन्तर पाया जाता है। उपलब्ध आगम पाठ में प्रथम सया पद का लोप हो गया है और दूसरे सया पद की जगह सययं पद मिलता है। इसी प्रकरण में टीकाकार सिंहसूरि ने भगवतीसूत्र का एक वाक्य उद्धृत किया है, यथा—

णो सुत्ते सुमिणं पासति, सुत्त जागरियाए वट्टमाणे सुमिणं पासति।

वर्तमान काल में प्राप्त व्याख्याप्रज्ञप्ति में—

'गोयमा ! नो सुत्ते सुविणं पासइ, नो जागरे सुविणं पासइ, सुत्तजागरे सुविणं पासइ।'—यह पाठ मिलता है जिसमें 'नो जागरे सुविणं पासइ', पाठअधिक है तथा नयचक्रके वट्टमाणे पद का लोप हो गया है। सुत्त जागरियाए के स्थान पर सुत्तजागरे पाठ मिलता है। सुमिण के स्थान पर सुविण मिलता है। आचार्य हेमचन्द्र ने आठवें अध्याय में इः स्वप्नादौ १/४६ सूत्र से स्वप्न आदि शब्दों के आदि अ का इ करके सिविण या सिमिण शब्द को साधा है उक्त सूत्र की वृत्ति में 'आर्षे उकारोऽपि' कहकर सुमिण शब्द को आर्ष माना है। इससे यह सिद्ध होता है कि सुमिण शब्द अधिक प्राचीन है। पासति के स्थान पर पासइ पाठ मिलता है जिसमें क्रिया प्रत्यय ति में से 'त' का लोप पाया जाता है। व्यंजन का लोप होना महाराष्ट्रीय प्राकृत का लक्षण है, न कि प्राचीन प्राकृत का।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रथम विधि नय के अन्त में आचार्य मल्लवादी ने भगवतीसूत्र का 'आता भन्ते ! णाणे अण्णाणे ? गोतमा ! णाणे नियमा आता, आता पुण सिया णाणे सिया अण्णाणे ।'–यह पाठ उद्धृत किया गया है ।

वर्तमान उपलक्ष्य भगवतीसूत्र में —

'आया भंते ! नाणे अन्नाणे ? णोयमा ! आया सिय नाणे, सिय अन्नाणे, नाणे पुण नियमं आया ।'—यह पाठ मिलता है जिसमें पाठ-क्रम में भिन्नता पाई जाती है । आता के स्थान पर आया पद ही प्रसिद्ध हुआ है जिसमें मध्यवर्ती 'त' का लोप हुआ है । संस्कृत आत्मन् शब्द का अशोक के पूर्वी शिलालेखों में एवं पालि सुत्तनिपात में अत्ता शब्द मिलता है, वही शब्द ध्वनि-परिवर्तन के नियमों के अनुसार परवर्ती काल में 'आता' बनता है और भी बाद परवर्ती काल में अर्थात् महाराष्ट्रीय प्राकृत काल में मध्यवर्ती 'त' का लोप होकर 'य' बनता है अर्थात् आता का आया होता है । वर्तमान में आत्मन् के अत्ता, अत्पा, आता, अप्पा, आया शब्द मिलते हैं जो निश्चित ही अलग-अलग काल के हैं अतः यह स्पष्ट है कि आता और आया भी भिन्न काल के हैं ।

चतुर्थ विधि नियम अर के अन्त में आचारांग का 'जे एगणामे से बहुणामे' (१-३-४) यह पाठ उद्धृत है । वर्तमान में 'जे एगं णामे से बहुं णामे जे बहुंणामे से एगं णामे'–यह पाठ मिलता है ।

टीकाकार सिंहभूरि ने स्वभावादि का निरूपण करते हुए यथोक्तं (पृ० २९) और 'तथा' कह कर के दो आगमपाठों को उद्धृत किया है—यथा

'किमिदं भंते ! अत्थित्ति वुच्चति ? गोयमा ! जीवा चेव अजीवा चेव' एवं 'किमिदं भंते ! समएत्ति वुच्चति ? गोतमा ! जीवा चेव अजीवा चेव ।' किन्तु वर्तमान में उपलब्ध आगम में उपरोक्त पाठ नहीं पाया जाता । यद्यपि मुनि जंबूविजयजी ने दोनों पाठ स्थानांग सूत्र के माने हैं और टिप्पण में वर्तमान स्थानांग सूत्र से तुलना भी की है जैसा कि –

जदत्थि णं लोगे तं चेव सव्वं दुपओआरं, तं जहा-जीवच्चेव, अजीवच्चेव···

स्थानांगसूत्र २.१.५७.५९

तथा–समयाति वा आवलियाति वा जीवाति वा अजीवाति वा पवुच्चइ ।

स्थानांगसूत्र २.४.९५

इस प्रकार अन्य कई पाठ हैं जिनमें पाठ भेद या क्रम भेद पाया जाता है । अतः यह सिद्ध होता है कि ग्रन्थकार एवं टीकाकार के सामने कोई अन्य आगम पाठ या परंपरा मौजूद रही होगी ।

भाषाकीय दृष्टि से देखा जाय तो नयचक्र एवं टीका में 'य' श्रुति वाले शब्द का प्रयोग अत्यल्प है । आचार्य हेमचन्द्र के प्राकृत व्याकरण के आधार पर असंयुक्त, अनादि क, ग, च, ज, त,द,प,य, व का प्रायः लोप होता है और लोप होने के बाद शेष 'अ' वर्ण के स्थान पर य श्रुति होती है जो महाराष्ट्रीय प्राकृत का लक्षण है और ऐसा करने पर भाषा का स्वरूप बदल जाता है एवं रचनाकाल में भी अन्तर मानना पड़ता है । नयचक्र में उद्धृत आगम पाठ में 'य' श्रुति वाले पाठ अल्प ही हैं जैसा कि गौतम शब्द के लिए केवल एक या दो स्थल को छोड़कर सभी जगह पर गोतम शब्द का ही प्रयोग प्राप्त होता है जब कि उपलब्ध आगम में प्रायः

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गोयम शब्द ही पाया जाता है। आत्मा के लिए आता प्रयोग मिलता है तथा पासति, वुच्चति, कतो आदि पद प्राप्त होते हैं जिनमें मध्यवर्ती त का कहीं भी लोप नहीं हुआ है; जब कि वर्तमान उपलब्ध आगम पाठों में आया, पासइ, वुच्चइ, कओ आदि पाठ मिलते हैं, इससे यह सिद्ध होता है कि नयचक्र में उद्धृत आगम पाठों की भाषा प्राचीन है। उपलब्ध आगम में कालक्रम से भाषाकीय परिवर्तन हुआ है।

उपलब्ध आगम की भी कई प्रतियाँ उपलब्ध हैं तथा अनेक प्रतियों का उपयोग करके आगमों का संपादन आज भी हो रहा है तथापि यह आश्चर्य की बात है कि जहाँ प्राचीन पाठ मिलते भी हैं वहाँ भी प्राचीन पाठ या शब्दों को टिप्पण में रखा जाता है और परंपरागत पाठ को ही मूल में रखा जाता है। अतः यह आवश्यक है कि प्राचीनतम पाण्डुलिपियों एवं प्राचीन ग्रन्थों में उपलब्ध आगम पाठों के आधार पर आगम की भाषा का निर्धारण करके एक नियमावली या सूची तैयार की जाय जो कि आगम को वास्तविक स्वरूप प्रदान करने में सहायक हो। आगम प्रभाकर मुनि श्री पुण्यविजयजी ने आगम पाठों को निर्धारित करने के लिए एक सूची बनाई थी जो आज उपलब्ध नहीं है। संभव है कि उनके संग्रह में वह सूची हो। उस सूची को प्राप्त करके तथा भाषा वैज्ञानिक संशोधन के आधार पर नई सूची तैयार हो सके तो भविष्य में शुद्ध संस्करण सुलभ हो पाएगा।

नयनचक्र में उद्धृत आगमपाठ

(१) ३.७ एवं दुवालसंगं गणिपिडगं दव्वतो एगं पुरिसं पडुच्च सादियं सपज्जवसियं अणेगे पुरिसे पडुच्च अणादियं अपज्जवसियं। खेत्ततो भरतेखेत्ते पडुच्च सादियं सपज्जवसियं, महाविदेहे पडुच्च अणादियं अपज्जवसियं। कालओ उस्सप्पिणि-अवसप्पिणीओ पडुच्च सादियं सपज्जवसियं, णो उस्सप्पिणिअवसप्पिणीओ पडुच्च अणादियं अपज्जवसियं। [भावओ] जे जदा जिणपण्णत्ता भावा इत्यादिना सादियं सपज्जवसितमेव [नन्दि सू० ४२]

(२) इमा णं भंते ! रयणप्पभा पुढवी किं सासया असासता ? गोतमा ! सिया सासया सिया असासया ? से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइसिया सासया सिया असासयत्ति ? गोतमा ! दव्वट्ठताए सासता वण्णपज्जवेहिं गंधपज्जवेहिं रसपज्जवेहिं फासपज्जवेहिं संठाणपज्जवेहिं असासता [जीवाभि० सू० ३/१/७८]

(३) ११५.४ आता भंते ! णाणे, अण्णाणे ? गोतमा ! णाणे णियमा आता, आता पुण सिया णाणे सिया अण्णाणे [भगवती सू० १२/१०/४६८]

(४) १७९.१० से किं भावपरमाणू ? भावपरमाणू वण्णवंते गंधवंते रसवंते फासवंते [भगवती सू० २०/५/६००]

(५) १८३.६ सुत्ता अमुणी सया, मुणीणो सया जागरंति [आचाराङ्ग १/३/१]

(६) १८३.२४ णो सुत्ते सुमिणं **पासति**, सुत्तजागरियाए वट्टमाणे **पासति** [भगवती सू० १६/५/५७७]

(७) १८६.१९ पुव्वि भंते ! कुक्कुणी पच्छा अंडए ? पुव्वि अंडए पच्छा कुक्कुणी ?
३६२.१० रोहा जा सा कुक्कुडी सा **कतो** ? अंडगातो ! जे से अंडए से कतो ? कुक्कुडीतो। एवं रोहा ! पुव्वि पि एते पच्छा वि एते, दो वि एते सासता भावा अणाणुपुव्वी एसा रोहत्ति [भगवती सू० १/६/५३]

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सव्वजीवाणं भंते ! एक्कमेक्कस्स मातत्ताए पित्तिताए भावित्ताए भज्जत्ताए पुत्तत्ताए धीतित्ताए ? गोतमा ! असति अदुवा अणंतखुत्तो ।

[भगवती सू० १२.७.४५८]

१८९.२४ एकोऽप्यहमनेकोऽप्यहम् [भगवती सू० १८.१०.६४७]

१९०.७ अक्खरस्स अणंतभागो णिच्चुग्घाडितओ सव्वजीवाणं [नन्दि सू० ४२] तद्व्याख्यानिदर्शनं च [तथा भाष्येऽपि] इति ५५९ तम्पृष्ठे । तं पि जदि आवरिज्जिज्ज तेण जीवो अजीवयं पावे । सुट्ठु वि मेहसमुदये होइ पभा चंदसुराणं ॥ (नंदिसू. ४२)

२१८.१९ केई णिमित्ता तहिया भवंति केसिं च तं विप्पडिएत्ति णाणं ।

[सूत्रकृताङ्ग १२.१०]

२२८.५ किमिदं भंते ! अत्थित्ति वुच्चति ? गोयमा ! जीवा चेव अजीवा चेव, किमिदं भंते ! समएत्ति वुच्चति ? गोतमा जीवा चेव अजीवा चेव ॥

[स्थानांग सू०]

२४५.१ किं भवं एके भवं, दुवे भवं, अक्खुए भवं, अव्वए भवं, अवट्ठिए भवं, अणेकभूतभव्वभविए भवं ? सोमिला ! एके वि अहं दुवि वि अहं अक्खुए वि अहं अव्वए वि अहं अवट्ठिते वि अहं अणेकभूतभव्वभविए वि अहं [भगवती सू० १८.१०.६४७]

२७७.२६ ते च्चेव ते पोग्गला सुब्भिगंधत्ताए परिणमंति ते चेव ते पोग्गला दुब्भिगंधत्ताए परिणमंति [ज्ञाताधर्म]

३३४.३ दुविहा पण्णवणा पणत्ता जीवपण्णवणा अजीवपण्णवणा च—किमिदं भंते ! लोएत्ति पवुच्चति ? गोयमा ! जीवा चेव अजीवा चेव, एवं रयणप्पभा जाव ईसी पब्भारा समयावलियादि [प्रज्ञा १.१.]

३७५. जे एकणामे से बहुणामे [आचा० सू० १.३.४]

४०७.१८ परमाणुपोग्गले णं भंते ! किं एयति वेयति चलति फंदति खोभति खुभति तं तं भावं परिणमति ? हंता गोतमा ! तदेव जाव परिणमति

[भगवती सू० ५.७.२१२]

४१५.२ अत्थित्तं अत्थिते परिणमति [भगवती सू० १.३ ३२]

४१४ २४ एक्केक्को य सतविधो सत्त णयसया हवंति ते चेवं [आव० नि० २२६]

४६९ १२ अगणिरूपिता अगणिपरिणामिता अगणिसरीरेति वत्तव्वं सिया

[भगवती सू० ५.२.१८१]

५५०१४ एक्केक्को य सतविधो सत्त णयसता हवंति एवं तु ।
बितियो वि अ आदेसो पंच णयसता हवंतेवं ॥ [आव० नि० ७५९]

५५०.२ आता भंते ! पोग्गले, णो आता ? गोतमा ! सिया आता परमाणु पोग्गला सिया णो आता । से केणट्ठेण भंते ! एवं वुच्चति-सिया आता परमाणुपोग्गले सिया णो आता ? गोतमा ! अप्पणो आदिट्ठे आता परस्स आदिट्ठेणो आता [भगवती सू० १२.१०.४६९]

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१. 'दव्वत्तो' साइअं

२. 'अणाइयं' 'खेत्तओ' साइयं' अणाइयं, साइअं अणाईयं, जया, साइयं,

३. आया भंते ! नाणे, अन्नाणे ? गोयमा ! आया सिय नाणे सिय अन्नाणे, नाणे पुण नियमं आया ।

आत्मन्—शब्द अशोक के पूर्वी शिलालेखों में अत्ता; पालि-ग्रन्थ सुत्तनिपात में अत्ता शब्द ही ध्वनिपरिवर्तन के नियमों के अनुसार परवर्तीकाल में आता बनता है और भी बाद के परवर्ती काल अर्थात् महाराष्ट्री प्राकृत काल में मध्यवर्ती त का लोप होकर य बनता है अर्थात् आता का आया होता है ।

गिरनार—अत्पा, अप्पा

आगम के अत्ता, **आता**, अप्पा, **आया** चारों शब्दों का समय अलग-अलग है, अप्पा बाद में आया है ।

४. कइविहे णं भंते ! परमाणुपोग्गले पण्णत्ते ? गोयमा ! चउविहे परमाणुपोग्गले पण्णत्ते । तं जहा–दव्वपरमाणु, खेत्तपरमाणु कालपरमाणु, भावपरमाणु ।

५. सुत्ता अमुणी मुणिणो सययं जागरंति ।

६ इः स्वप्नादौ. १.४६,

स्वप्न इत्येवमादिषु आदेरस्य इत्वं भवति,

सिविणो, सिमिणो, आर्षे उकारोपि-सुमिणो,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org